ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-1* Issue-12* March- 2017
Anthology : The Research

भारत की प्रारम्भिक मुद्राएं : एक अध्ययन

जितेन्द्र सिंह नौलखा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
प्राचीन इतिहास विभाग,
के0 एन0 पी0 जी0 कॉलेज,
ज्ञानपुर, भदोही,
उ0 प्र0

स्नेहा गौतम
शोध छात्रा,
प्राचीन इतिहास विभाग,
के0 एन0 पी0 जी0 कॉलेज,
ज्ञानपुर, भदोही,
उ0 प्र0

सारांश

सिक्के देश के इतिहास के निर्माण में हमारी सहायता करते हैं। ये हमें शासन का परिचय देकर यह बताते हैं कि भारत के किस भाग में किस प्रकार का प्रशासन रहा। इन सिक्कों के द्वारा हमें विभिन्न राजाओं के अस्तित्व का ज्ञान प्राप्त होता है। सिक्के कालक्रम का निर्धारण करने में भी हमारी सहायता करते हैं। सिक्कों की प्राप्ति से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि राजा ने कब तक राज्य किया। इनके आधार पर राजा के गद्दी पर बैठने तथा उसकी मृत्यु की तिथि का अनुमान लगाया जा सकता है। सिक्कों के विभिन्न प्राप्ति स्थानों से उनसे सम्बन्धित राजा के राज्य विस्तार का पता चलता है। सिक्कों से हमें इतिहास संरचना के विषय में प्रामाणित जानकारी प्राप्त होती है। सिक्के इतिहास संरचना की महत्वपूर्ण कड़ी हैं।

मुख्य शब्द : मुद्रा, विनिमय, कार्षापण, भारतीय, प्राचीन, शतमान, कलाकृतियाँ, लेख।

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय मुद्रा का उदय

प्राचीन भारत में विनिमय के साधन हेतु मुद्रा की उत्पत्ति का आरम्भिक इतिहास पूर्णतः अस्पष्ट है। मुद्रा का आविष्कार कब और कैसे हुआ इसका निर्धारण अब तक नहीं हो पाया है? प्रसिद्ध मौद्रिक अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड केन्ज्र का विचार है कि मुद्रा का आविष्कार बहुत पहले हो चुका था, पर यह बताना सम्भव नहीं है कि इसका आविष्कार कब हुआ है।[1] वस्तु विनिमय का माध्यम मुद्रा का आविष्कार आर्थिक विकास के इतिहास में एक विशेष महत्वपूर्ण घटना थी। वस्तुतः विनिमय कार्य के लिए मुद्रा प्रचलन के सम्बन्ध में उपलब्ध साक्ष्यों का अपर्याप्त संदिग्ध और विभिन्न अर्थ देने वाला होता है।[2] इसलिए प्राचीन भारत में मुद्रा प्रचलन के अस्तित्व के सम्बन्ध में विद्वानों में बहुत मतभेद है। विल्सन, प्रिंसेप, एलन, कनेडी आदि विद्वान प्राचीन भारत में मुद्रा प्रचलन को विदेशी प्रभाव मानते है। जबकि रैप्सन, थामस, कनिंघम आदि विद्वान इसे विदेशी प्रभाव से मुक्त देशी प्रभाव मानते है। विल्सन और प्रिंसेप मुद्रा प्रचलन को यूनानी प्रभाव (विदेशी प्रभाव) मानते है। इनके मतानुसार यूनानी आगमन से पूर्व भारतीय मुद्रा के रूप में जिस उपकरण को प्रयुक्त करते थे, वह बहुधा सोने–चाँदी के धातु–पिण्ड के रूप में होते थे, पर उन पर किसी प्रकार की लिखावट, लेख अथवा चिन्ह नहीं होते थे।[3]

जेम्स प्रिंसेप ने जिन भारतीय मुद्राओं से यूनानी मुद्राओं की समानता स्थापित करने का यत्न किया है। ये भारतीय मुद्राएँ औडम्बरों से सम्बन्धित थीं।[4] विदेशी अनुकरण के पोषक स्तम्भ भारत में सिक्कों का विचार पॉचवी शताब्दी के अन्त में या चौथी शताब्दी ई0पू0 के प्रारंभ में यूनानी राज्य से आया हुआ मानते हैं। एलन भारतीय मुद्रा को पारसिक मुद्रा सिगलोई से प्रभावित मानते हैं।[5] कनेडी का मत है कि भारतीय सिक्के बेबिलोन की मुद्रा से प्रभावित थे तथा प्राचीन भारत में मुद्रा का प्रचलन छठीं शताब्दी ई0पू0 में पश्चिमी एशिया के साथ समुद्री व्यापार के साथ आरम्भ हुआ।[6]

प्रिंसेप, एलन और केनेडी के मत इसलिए उचित नहीं प्रतीत होते हैं कि ये पाश्चात्य विद्वान मानते है कि भारतीयों को मुद्रा के सम्बन्ध में ज्ञान सिकन्दर के आक्रमण के बाद हुआ। अतएव ये लोग भारतीय मुद्रा पर यूनानी प्रभाव देखते हैं। प्राचीन भारत में विनिमय के लिए धातु पिण्ड के अतिरिक्त आहत सिक्के भी व्यवहार में थे।[7] रैप्सन, थामस और कनिंघम प्राचीन भारतीय मुद्रा को आहत मुद्रा कहते हैं। ये मुद्रा विदेशी प्रभाव से मुक्त थी। भारत वर्ष में पश्चिमोत्तर प्रदेश की खुदाई में आहत सिक्के सिकन्दर की मुद्रा के साथ मिले हैं, जो पूर्व मौर्यकाल के है। नन्द राजाओं ने व्यापार की सुविधा के निमित्त माप–तौल के साथ सिक्के निर्माण का कार्य आरंभ किया, जिसका अनुकरण आगे के भारतीय शासक करते

रहे। अतः सिकन्दर के सिक्कों के साथ आहत सिक्कों का प्राप्त होना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त प्राचीन भारत में अवन्ति के मालव जन यूनानी प्रभाव से पूर्व ठप्पे का व्यवहार जानते थे। अतः ईसा पूर्व छठीं शताब्दी से आहत सिक्के भारत में अवश्य प्रचलित हुए होगें।[8]

ए0एस0 अल्तेकर ने उन सभी विदेशी विद्वानों का विरोध किया है, जो प्राचीन भारतीय मुद्रा और पारसिक सिगलोई में समानता बताते हैं। इनके अनुसार सर्वप्रथम तो दोनों सिक्कों की तौल मे पर्याप्त अन्तर है और फिर भारत में सिगलोई सिक्कों के प्रचलित होने से पूर्व आहत सिक्कों का प्रचलन तथा निर्माण हो चुका था।[9] अल्तेकर के अनुसार भारत से ऐसी सिगलोई मुद्राएँ प्राप्त है, जिनका पृष्ठतल आहत था। इसका तात्पर्य यह है कि सिगलोई मुद्राओं को भारत वर्ष में फिर से आहत शैली में चिन्हित किया जाता था।[10] अल्तेकर के ही अनुसार कनेही का यह मत है कि बेबिलोन के सिक्कों का प्रभाव भारतीय सिक्कों पर था, उचित नहीं प्रतीत होता। सर्वप्रथम दोनों की तौल में अन्तर है बेबिलोन के शेकेल्स का वजन साधारणतया 132 ग्रेन था जबकि भारतीय आहत सिक्कों का वजन 56 ग्रेन था। दूसरे विशिष्ट आहत सिक्कों की उत्पत्ति सम्भवतः मध्य देश (उत्तर प्रदेश) में हुई थी और यह अत्यधिक सन्देहास्पद है कि पाश्चात्य भारत के कुछ थोड़े से व्यापारियों को छोड़कर ये बेबिलोन के शेकेल्स से परिचित रहे होगें और न ही बेबिलोन के शेकेल्स भारत वर्ष में पाये गए हैं। इसलिए यह असम्भव है कि भारतीय सिक्कों को थोड़ा बहुत भी बेबिलोन के सिक्कों ने प्रभावित किया हो। बेबिलोन के सिक्के 525 ई0पू0 से पूर्व के नहीं हो सकते जबकि भारतीय सिक्के कम से कम इससे दो शताब्दी पूर्व स्थापित हो चुके थे। अतः प्राचीन भारतीय मुद्रा विदेशी प्रभाव से मुक्त अपने देश की ही थी।[11]

अध्ययन का उददेश्य

प्राचीन भारत में विनिमय के लिए प्रयुक्त प्राचीन सिक्कों को 'कार्षापण' कहते थे। सिक्के के इस नाम के सम्बन्ध में वासुदेव उपाध्याय अपनी पुस्तक ''प्राचीन भारतीय मुद्राएँ'' में कहते है भारतीय सिक्के का नाम 'पण' माना गया है, जो कर्ष (बीज) द्वारा तौलने के कारण कार्षापण कहलाया। इन सिक्कों के परीक्षण से ज्ञात होता है कि गर्म धातु को पीटकर तथा आकार विशेष का तैयार कर कारीगर उस पर मुद्रा चिन्ह दिया करता था। इनकी निर्माण शैली के कारण ही इन सिक्कों को पंचमार्क का नाम दिया। इसी कारण 'आहत सिक्का' या चिन्हित सिक्का संज्ञा से नया नामकरण किया गया है।[12]

सैन्धव सभ्यता में विनिमय हेतु निश्चित मुद्रा प्रणाली अस्तित्व में नहीं थी, परन्तु मुद्रा प्रणाली अस्तित्व में नहीं थी, परन्तु मुद्रा प्रणाली विकसित हो रही थी। अल्तेकर के अनुसार सैन्धव घाटी के उत्खनन से प्राप्त हुई वस्तुओं में एक बड़ी संख्या में 13 ग्रेन इकाई की माप प्रणाली पर आधारित पत्थर के बाट प्राप्त हुए हैं। अनेक पत्थर के ऐसे बाट खोजे गए हैं जो 2, 4, 8, 10 आदि की बहुगुणिक इकाई पर आधारित है। बहुत थोड़े से धातु के टुकड़े मिले हैं जिन्हे सिक्के कहा जा सकता है। उत्खनन के फलस्वरूप आभूषणों से भरी चॉदी की एक संदूकची प्राप्त हुई है जिसमें चॉदी बारह टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं। इन प्राप्त चॉदी के टुकड़ों में से एक टुकड़ा वर्गाकार है जिस पर कीलाधर लेख अंकित है इससे ज्ञात होता है कि यह टुकड़ा या तो असीरिया से आयातित था या तो फिर सैन्धव घाटी ही में कोलाधर लेख में अंकित किया गया होगा। शेष अन्य चॉदी के टुकड़े में से तीन टुकड़े चॉदी के धातु पिण्ड थे। जो वजन में क्रमशः 34, 45, 66.5 ग्रेन है। जिनमें कोई निश्चित भार प्रणाली नहीं है।[13] शेष अन्य चार चॉदी के टुकड़े जिनका भार लगभग 45, 90, 91, 94 ग्रेन था जिनमें एक निश्चित भार प्रकिया पर आधारित मालूम पड़ते है। लेकिन यह सैन्धव घाटी की 13 ग्रेन इकाई वाले भार प्रणाली से सर्वथा भिन्न है।[14] तथा दो अन्य चॉदी के टुकड़े जिनका वजन 52 और 57 ग्रेन है, के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि यह सैन्धव घाटी के 13 ग्रेन वाली भार प्रणाली पर आधारित है। दो अन्य टुकड़े जिनका वजन क्रमशः 60.5 और 30.2 ग्रेन है भी सैन्धव घाटी की भार प्रणाली के अनुरूप नहीं है।

अल्तेकर के ही अनुसार ये केवल घात्विक टुकड़े है जो सिक्कों के रूप और आकार के हैं। इन धात्विक टुकड़ों पर कोई चिन्ह अथवा लेख उत्कीर्ण नहीं हैं और न ही ये किसी मान्य तौल पर आधारित थे। इन कीमती धात्विक टुकड़ों से ज्ञात होता है कि ये धात्विक टुकड़े एक विशेष आकार और वजन के बनना आरम्भ हुए थे। लेकिन अभी तक इन सिक्कों के निर्माण के सन्दर्भ में किसी विशेष वजन प्रणाली को अपनाया नहीं जा सका था। जैसा कि पत्थर के बाट के संदर्भ में अपनाया जा चुका था वस्तुतः सैन्धव सभ्यता में सिक्के विकसित हो रहे थे।[15]

जहाँ तक वैदिक युग में सिक्कों का प्रश्न है, इस युग में अदल?–बदल की प्रणाली का प्रचुर चलन था। वैदिक युग के आर्थिक गठन में विनिमय प्रक्रिया के दो माध्यम रहे हैं–(1) वस्तु और (2) धातुऐं। इनमें विनिमय के लिए वस्तु का माध्यम अधिक था। एस0के0 चक्रवर्ती के अनुसार वैदिक युग में वस्तु विनिमय के लिए गैर धात्विक प्रणाली प्रचलन में थी।[16] ऋग्वेद के एक अनुच्छेद में एक दृष्टांत आता हैं, जिसमें इन्द्र की एक प्रतिमा का दाम दस गायों का उल्लेख मिलता है। दूसरे स्थान में एक उक्ति पाते है कि इन्द्र की एक प्रतिमा को सौ या हजार गायों के बदले में भी देने से इंकार करता है।[17] इससे यह निश्कर्ष निकलता है कि प्रारम्भिक वैदिक युग के आरम्भ में जन–साधारण के मध्य गाय आदि गैर धात्विक वस्तुऍ मुख्य विनिमय का साधन थीं। वैदिक कालीन भारत में दो प्रकार के द्रव्यमान (1) निस्क और (2) हिरण्य पिण्ड प्रचलन में थे। किन्तु निश्चयपूर्वक यह कहना कठिन है कि इनका स्वरूप और अभिप्राय क्या था, क्योंकि ऋग्वेद में इनका उल्लेख व्यापारिक विनिमय के सन्दर्भ में नहीं आता है।[18] यद्यपि डी0आर0 अण्डारकर का विचार है कि वैदिक युग में निस्क एक सिक्कें का नाम था, जो उस समय देश में प्रचलित था।[19] किन्तु वैदिक साहित्य के आधार पर यह विचार ठीक नहीं लगता।

ए0एस0 अल्तेकर का विचार था कि ऋग्वेद में वर्णित निस्क एक सामान्य आभूषण है, इसे कोई आदर्श रूप का सिक्का नहीं मानना चाहिए। ऋग्वेद में एक स्थल

पर भगवान रूद्र का विश्वरूप निस्क पहने वर्णित है।[20] विद्वानों के अनुसार विश्वरूप निस्क की एकरूकता मुद्रा से नहीं है। इसका संकेत अन्य आभूषण आदि, रूक्म, कर्णशोभन की भांति ऐसे आभूषण से है, जिनका नाम निस्क है। निस्क के सम्बन्ध में डा0 अल्तेकर ने ऋग्वेद का वह स्थल बताया है जहॉ एक राजा भव्य था जो दानशील था, उसने ऋषि ककक्षिवत को दस घोड़े तथा दस निस्क का दान दिया।[21] अर्थवेद में ऐसे राजा का उल्लेख है, जिसने अपने पुरोहित को सौ की संख्या में निष्क दिया। दोनों ही स्थल पर निष्क का प्रयोग संख्या में है। अतः डा0 अल्तेकर ने वैदिक साहित्य के अनुशीलन के आधार पर कहा कि खादि, रूक्म, कर्णशोभन, हिरण्यपिंड केवल आभूषण थे और निष्क सम्भवतः मुद्रा थी।[22] वस्तुतः हम कह सकते हैं कि निष्क को वैदिककाल में निश्चित मुद्रा के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं थी, किन्तु आर्थिक जीवन में इसका कुछ प्रयोग अवश्य था। निश्चय ही निष्क का प्रयोग परवर्ती साहित्य में मुद्रा रूप में मिलता है। महाभारत में निष्क एक मुद्रा के रूप में वर्णित है।[23] जातकों में निष्क का वजन चार सुवर्ण बताया गया है।[24]

जातकों में निष्क एक मुद्रा के रूप में विनिमय के माध्यम के लिए प्रयुक्त होता हुआ मिलता है।[25] अतः इसी प्रकार यह माना जा सकता है कि ऋग्वैदिक हिरण्यपिंड ने इस युग में और आगे के युग में निश्चित वजन और मूल्य के सुवर्णो का रूप धारण कर लिया था।[26] वैदिक संहिता और ब्राहमण ग्रन्थों में शतमान और पाद नामक दो अन्य द्रव्यों का भी उल्लेख मिलता है।[27]

डी0आर0 भण्डारकर तथा अन्य विद्वानों का मत है कि शतमान सोने का सिक्का था।[28] ए0एस0 अल्तेकर ने शतमान के प्रयोग के सम्बन्ध में शतपथ ब्राहमण[29] का उल्लेख किया है, जिसमें कहा गया है कि यज्ञ के अवसर पर दक्षिण के रूप में देय वस्तु शतमान है।[30] कात्यायन श्रौत सूत्र में शतमान को वर्तुलाकार कहा गया है।[31] इसका प्रयोग दान रूप में था, किन्तु भारत के आर्थिक जीवन में इसका प्रयोग क्या था, इसकी सूचना नहीं मिलती है। वैदिक शतमान की तौल के सम्बन्ध में अनेक मतांतर है। शतमान एक निश्चित तौल का सम्भवतः 100 कृस्णल का धातु का एक खण्ड रहा होगा तथा विनिमय के साधन के रूप में निस्क के साथ प्रयुक्त होता था।[32] कात्यायन श्रोत सूत्र के टीकाकार तथा भाष्यकार के अनुसार शतमान का भार निश्चित नहीं था। कर्क–जो कात्यायन श्रोत सूत्र के टीकाकार हैं–के अनुसार शतमान का भार सौ रत्ती था।[33] शतमान की तौल सौ रत्ती या कृष्णल के तुल्य थी या नहीं इस सन्दर्भ में डी0सी0 सरकार का विचार है कि शतमान का वजन तीन सौ बीस रत्ती (320) था।[34] वास्तव में यह विचार मनुस्मृति और याज्ञवल्क्य पर आधारित है। लिपि सम्बन्धी साक्ष्य के आधार पर उन्होनें कहा कि शतमान का सौंवा भाग कृष्णल नहीं वरन् मन्जादिस (Manjadis) है।[35]

डॉ0 अल्तेकर के अनुसार बाद की संहिता एवं ब्राहमण युग में हम एक धातु टुकड़ा पाते हैं जो शतमान था। शतमान सौ रत्ती या कृष्णल के तुल्क है।[36] पाद का उल्लेख वृहदारण्यक उपनिषद में आता है।[37] किन्तु इसमें पाद किस धातु का बना था इसका संकेत नहीं है। डॉ0 अल्तेकर पंतजलि के आधार पर कहते हैं कि पाद सोने का एक सिक्का था। डॉ0 अल्तेकर के अनुसार वह चॉदी का सिक्का नहीं था।[38] पाद कोई स्वतंत्र मुद्रा नहीं थी, वरन यह शतमान अथवा सुवर्ण अथवा निष्क का चौथा भाग था।[39]

वैदिक निष्क, शतमान, सुवर्ण एवं पाद के आधार पर भारतीय मुद्रा के इतिहास को आगे बढ़ाना सम्भव नहीं है। वाणिज्य के क्षेत्र में यह नगण्य प्रतीत होता है।[40] डॉ0 अल्तेकर के अनुसार ये सभी मुद्राएँ वाणिज्य से सम्बन्धित होकर उपहार, दान, दक्षिणा एवं विद्वतापूर्ण प्रवीणता के लिए व्यवहृत होती थी।[41] धातु के वे टुकड़े परम्परागत रूप में नाप, मूल्य, वजन में एक समान थे एवं सामाजिक, आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण हो गए थे, क्योंकि वह राजा की ओर से उपहार स्वरूप थे।[42] इनके तात्विक मूल्य में धीरे–2 लोगों की निष्ठा बढ़ने लगी थी। उत्तर वैदिक काल में ये धातुएँ–मुद्राएँ जैसे निस्क और सुवर्ण क्रय–विक्रय का माध्यम बन गई थी।[43] जातक में निस्क[44] और माप[45] का उल्लेख वाणिज्य के सन्दर्भो में आता है। पाणिनी ने अपने एक सूत्र में निस्क, सुवर्ण माषक और शतमान का उल्लेख किया है।[46] मूल्यवान वस्तुओं के क्रय–विक्रय के लिए मनुष्यों ने सोने चॉदी के सिक्कों को अपना लिया था।

वैदिक कालीन भारतीय संस्कृति में निस्क, सुवर्ण, शतमान और पद लगभग आधुनिक स्वर्ण सिक्कों की भांति थे। इनके वजन निश्चित और भली–भांति ज्ञात थे। इनका निर्माण राजकीय पदाधिकारियों की देख–रेख में राजकीय कोषालय में होता था।[47] इनका संचय राजकोष में होता था, तथापि इन पर राज्य का एकाधिकार न था, बल्कि धनाढ्य व्यापारी दिन–प्रतिदिन विनिमय के माध्यम की बढ़ती आवश्यकता के कारण इनका निर्माण करने लगे थे। वी0ए0 स्मिथ के अनुसार आहत सिक्के जो भारतीय मुद्रा के प्रारम्भिक नमूने हैं, श्रेणियों एवं रजतकारों द्वारा शासन की अनुमति से चालू किए गए।[48] जे0 एलन के अनुसार तक्षशिला से प्राप्त चार सिक्के (जो कि तीसरी शताब्दी ई0पू0 के पूर्व के नहीं है) नेगम द्वारा चलाए गए है।[49]

निगम सिक्के का निर्माण कर सकता था, लेकिन राज्य में धीरे–2 जब मुद्रा निर्माण के नियंत्रण पर ध्यान दिया तब उसमें मुद्रा पर भी कड़ा नियंत्रण किया।[50] इस सन्दर्भ में लल्लन जी गोपाल का विचार उचित लगता है कि साम्राज्यवादी परंपरा ही मुद्रा प्रणाली के विकास का कारण और परिणाम थी। राज्य की यह बढ़ती आवश्यकता हो गयी थी कि निंरतर सिक्कों का निर्माण हो।[51] तथापि छोटे–2 राज्यों को मुद्रा निर्माण का अधिकार नहीं था। (जैसा कि निगम के सिक्के के विषय में कहा गया है।)[52] जब राज्य के मुद्रा निर्माण कार्य स्वयं ले लिया तब व्यक्तिपरक लक्षण के चिन्ह सिक्कों पर महत्व के हो गये। दुर्गा प्रसाद[53] ई0एम0सी0 वाल्श[54] और डी0डी0 कौसाम्बी[55] जैसे विद्वानों ने शिशु नाग, नन्द मौर्य तथा गुप्तकाल के राजाओं की वैयक्तिक मुद्राओं को पहचानने में मार्ग दर्शन किया है।

मुद्रा–विभेद एवं भार

समय की गति के साथ, निश्चित तौल और मूल्य का ''निष्क'' धातु–मुद्रा के रूप में महत्व प्राप्त कर

जाता है। जनसाधारण चौथी शती ई0पू0 तक अपने धन को निस्क के रूप में मापने लगा था।[56] मनु एवं याज्ञवलक्य ने निस्क चार सुवर्ण के तुल्य बताया है।[57] पतंजलि का पादनिस्क एक सुवर्ण बराबर रहा होगा। कौटिल्य के अनुसार एक सुवर्ण की तौल एक कर्ष या अस्सी रत्ती के बराबर थी।[58] अतः चार कार्षापण या चार सुवर्ण एक निस्क के बराबर होगा। एक अर्द्धनिस्क, दो सुवर्ण अथवा दो कार्षापण के तुल्य था। सुवर्ण या पादनिस्क से कम मूल्य वर्ग का एक सिक्का माष या सुवर्णमाष था।[59] डी0आर0 भण्डारकर के अनुसार माष या सुवर्णमाष तौल में एक मास का स्वर्ण सिक्का था।[60] अतः स्वर्ण सिक्के निस्क का मानक निम्न होगाः–

5 कृष्णल[99] = 1 माष अथवा 1 सुवर्णमाष
या रत्ती
16 माष = 1 सुवर्ण = 1 पादनिस्क
2 पादनिस्क या
2 सुवर्ण = 1 अर्ध निस्क
4 सुवर्ण या
4 कार्षापण = 1 निस्क

स्वर्ण निस्क की भांति प्राचीन भारतीय वैदिक युग में शतमान का उल्लेख भी आता है। वैदिक काल में शतमान का प्रयोग दान–दक्षिणा के लिए था। वेदोत्तर काल में शतमान का प्रयोग आर्थिक गठन में था। पाणिनि की अष्टाध्यायी[61] में शतमान का प्रयोग हुआ है– *शतमानेण क्रीतं शतमानम्* अर्थात किसी वस्तु को एक शतमान में खरीदने पर शातमानम् कहा जाता था। ऐसी स्थिति में कहा जा सकता है कि वैदिक काल में शतमान को वास्तविक मुद्रा की मान्यता नहीं मिली थी, पर वेदोत्तर काल में शतमानकों मुद्रा की मान्यता मिलने लगी थी और पॉचवी–चौथी शताब्दी ई0पू0 के अंतर्काल में शतमान को निश्चित मुद्रा का स्थान मिल गया था। शतमान की तौल 100 रत्ती थी। डा0 सी0 सरकार और एस0के0 चक्रवर्ती, मनुस्मृति[62] और याज्ञवल्क्य स्मृति[63] के आधार पर बताते है कि चॉदी के शतमान की तौल 320 रत्ती थी। डॉ अल्तेकर ने शतमान को 200 रत्ती का बताया है। उनके अनुसार 320 रत्ती के शतमान का प्रयोग केवल लेखा पुस्तकों तक सीमित था।[64] वी0एस0 अग्रवाल के अनुसार पांचवी शताब्दी ई0पू0 में चॉदी का शतमान भी बनता था।

अतः स्पष्ट है कि वैदोत्तर काल में निष्क की भांति शतमान के व्यवहार में परिवर्तन हो गया था। शतमान के प्रयोग विधि को स्पष्ट करने के सन्दर्भ में डा0 अग्रवाल ने अपनी समीक्षा में पुरातात्विक तथा साहित्यिक दोनो साक्ष्य दिये है और प्राचीन काल से प्राप्त कुछ विशेष मुद्रा की ओर ध्यान आकर्षित कराया है। इन मुद्राओं को पुरातत्व विद्वानो ने विशेष नाम नत शलाका मुद्राएं (BENT- BAR COINS) दिया है। इनके निर्माण में चॉदी का प्रयोग है और इनकी तौल 75 ग्रेन (41.7 रत्ती) से 79 ग्रेन (44.0 रत्ती) तक है।[65] पुरातत्व शोध के अनुसार इनका समय 800 ई0पू0 बताया गया है। डॉ0 अग्रवाल ने इसको साहित्य में वर्णित अर्धशतमान कहा है तथा पैल निधि (PAIL–HOARD) से प्राप्त 44 ग्रेन के सिक्के को चौथाई शतमान या वाद शतमान कहा है।[66] डॉ0 दुर्गाप्रसाद 14 पतले तथा चौड़े सिक्को का उल्लेख करते है जो आजकल लखनऊ के संग्रहालय में है और जो तौल में 42 ग्रेन (23.3 रत्ती) हैं। ये चतुर्थ शतामान है।[67]

मुद्रा निर्माण के केन्द्र

यह अनुमान किया जाता है कि राजधानी में अवश्य ही टकसाल गृह बनाए जाते होंगे। व्यापारिक केन्द्रों पर भी टकसाल होने की संभावना की जाती है। जब राज्य को अपनी मुद्रा चलाने की आवश्यकता का अनुभव हुआ तब टकसाल स्थापित किए गए परन्तु दुर्भाग्य से किसी भी प्राचीन टकसाल के नाम का पता नहीं चल सका है। कतिपय साहित्यिक संदर्भो तथा संबंधित स्थलों से प्राप्त सॉचो तथा मुहरों के आधार पर वहां टकसाल होने की संभावना की जाती है। क्योंकि इन साँचों का प्रयोग निश्चित रूप से मुद्रा निर्माण के लिए किया जाता था। मथुरा, अतरंजीखेड़ा, काशी, नालंदा, कौशाम्बी इत्यादि से प्राप्त साँचे इन स्थलों पर टकशाला होने की सम्भावना को पुष्ट करते है।[68]

मुद्राओं पर लेख

भारत के सबसे प्राचीन सिक्के कार्षापण निशान लगाने के कारण ही चिन्हित नाम से पुकारे गए। ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में विदेशियों के अनुकरण पर सिक्कों पर लेख अंकित किए जाने लगे। भारत में यूनानी सिक्कों पर यूनान की लिपि में ही उपाधि सहित राजा का नाम अंकित करने की प्रथा थी। भारत पर डिमित के आक्रमण से स्थानीय जनता से सम्बन्ध बढ़ने लगा। विजित प्रदेशों में भारतीय यूनानी राजा सिक्के तैयार करने लगे। अतएव उनके लिए यह आवश्यक हो गया कि वहॉ की भाषा तथा लिपि का प्रयोग सिक्कों पर किया जाए। जनता की भाषा में राजा का नाम सिक्कों पर लिखना आवश्यक हो गया।[69]

भारत के प्राचीनतम सिक्कों पर केवल चिन्ह तथा प्रतीक अंकित थे, उन पर कोई लेख नहीं था। यहाँ तक कि ईरानी सिग्लोई भी लेख रहित थे। कतिपय विद्वानों ने कुछ आहत मुद्राओं पर मगध शासकों के नाम पढ़ने का प्रयास किया है। परन्तु यह अभिमत संदिग्ध है। लेखयुक्ति सिक्कों के प्रादुर्भाव का श्रेय हिन्द–यवन शासकों को दिया जाता है। जिनका कालान्तर में भारतीय राजवंशों ने भी अनुकरण किया। मुद्राओं पर ग्रीक, ब्राहमी, खरोष्ठी इत्यादि लिपियों तथा यूनानी, प्राकृत, संस्कृत, द्रविण इत्यादि भाषाओं का प्रयोग हुआ है। कुछ मुद्राओं पर शाही राजवंशों के लेख तथा कुछ पर नगर, जनपद, गणतंत्र, स्थानीय राजवंश तथा श्रेणियों इत्यादि से सम्बन्धित मुद्रा लेख प्राप्त होते हैं। मुद्रा प्रतीकों में विशिष्ट चिन्ह, शासकाकृति, पशु तथा वनस्पति जगत से सम्बन्धित आकृति, धार्मिक प्रतीक इत्यादि प्रमुख है। सर्वप्रथम हिन्द यवन शासकों ने ही मुद्राओं पर प्रतीकों के अतिरिक्त कतिपय संकेत चिन्ह का अंकन प्रारम्भ किया। जिनका अनुकरण दूसरे विदेशी शासकों द्वारा भी किया गया कुछ भारतीय राजवंशों (गुप्त) ने भी इसका अनुकरण किया, परन्तु इन लेखों का अभिप्राय सुस्पष्ट नहीं है।[70]

निष्कर्ष

भारतीय मुद्रा की उत्पत्ति के विषय में मुद्राशास्त्री एक मत नहीं हैं, बल्कि इनमें मतभेद है। इसका प्रमुख कारण यह है कि भारतीय मुद्रा की उत्पत्ति के विषय में

पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। प्राचीन भारत में मुद्रा की उत्पत्ति के विषय में यह अनुमान लगाया जाता है कि वस्तु–विनियमय के अत्यन्त विकसित स्तर पर पहुँचने के बाद सिक्कों का उद्भव हुआ। मुद्रा विज्ञान का आशय प्राचीनकाल के सिक्कों से है। मुद्राओं ने भारतीय इतिहास के निर्माण में पर्याप्त सहायता प्रदान की है। ऐतिहासिक परम्पराओं का सूक्ष्म ज्ञान मुद्राओं से होता है, क्योंकि मुद्राओं से अतीत एवं वर्तमान का श्रृंखलाबद्ध ज्ञान प्राप्त होता है। अतः प्राचीन इतिहास की संरचना के लिए सबल आधार के रुप में मुद्राओं का एक विशिष्ट स्थान है। सत्य है कि इतिहास के सृजन में मुद्राओं का साहित्य से अलग महत्व है। इतिहाकारों के अनुसार,''इतिहास, राजनीति एवं अर्थशास्त्र की विशेशताओं को यथार्थ रुप देने का श्रेय मुद्राशास्त्र को ही दिया जा सकता है।''

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *जॉन मेनार्ड केन्ज, ट्रीटाइज ऑन मनि खण्ड I लन्दन, 1930, पृ0 46*
2. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0आई0 खण्ड XV 1953, पृ0 1*
3. *वही, पृ0 1*
4. *प्रिसेप एलेज, ए पृष्ठ 53–54, जे0ए0एस0बी0, खण्ड I, पृ0 394, ए0एस0 अल्तेकर, ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 1*
5. *जे0 एलन, कैलेलाग ऑफ क्वायन आन एंशेट इण्डिया, पृ0 71*
6. *जे0, आर0, ए0एस0, 1898, पृ0 279, तुलनीय, जे0एन0एस0आई0, खण्ड ग्ट, पृ0 2 से।*
7. *वासुदेव उपाध्याय, प्राचीन भारतीय मुद्राएँ, पृ0 7–8*
8. *वही, पृ0 47*
9. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐंड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV 1953, पृ0 6–7*
10. *वही।*
11. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV 1953, पृ0 6–7*
12. *वासुदेव उपाध्याय, प्राचीन भारतीय मुद्राएँ, (पटना, 1971), पृ0 46*
13. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐंड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 14*
14. *वही पृ0 15*
15. *सिंह शंकर आनन्द, 2000, भारत की प्राचीन मुद्राएँ, इलाहाबाद पृ0 21*
16. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐंड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 15*
17. *एस0के0 चक्रवर्ती, करेन्सी प्रॉब्लम्स इन एंशेट इण्डिया (कलकत्ता) 1937, पृ0 5*
18. *क इयं दशभिर्ममेन्द्र क्रीणति धेनुभिः 11 ऋग्वेद, प्टए 24–10*
19. *ऋग्वेद, 2.33.10, वैदिक इंडेक्स, खण्ड I, पृ0 454–55*
20. *डी0आर0 भण्डारकर, लेक्चर्स ऑन ऐशट इंडियन न्यूमिसमेटिक्स, (कलकत्ता : 1921) पृ0 64*
21. *अहिन्बभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निहकं यजतं विश्वरूपम्।*
22. *अर्हन्निदं दयसे विश्वमभवं न वा ओजीयो रूद्र त्वदस्ति।।*
23. *ऋग्वेद II 33–10*
24. *ऋग्वेद, I, 126.2*
25. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 11–14*
26. *महाभारत अरण्यपर्व, अध्याय 23, आस्थाय वीरा : संहिता वनाय प्रतस्थिरे भूतपति प्रकाशाः।*
27. *हिरण्यनिस्कान् वस्नानि गाश्च प्रदाय शिक्षाक्षरमन्त्र विदभवः।।*
28. *मनुस्मुति, VIII 130, चतुः सौवर्णिको निस्को विद्वायस्तु प्रमाणतः।*
29. *जातक, खण्ड IV, पृ0 227*
30. *ऋग्वेद, 6.47.23, शतपथ ब्राहमण XII, 7.20.13, XIII, 2.3.2*
31. *तैत्तिरीय संहिता, 2.3.11.5, शतपथ ब्राहमण, 5.4.3. 23–25, वैदिक इंडेक्स, खण्ड I पृ0 343*
32. *डी0आर0 भण्डारकर, लेक्चर्स ऑन एंशेट न्यूमिसमेटिक्स, पृ0 57–58*
33. *शतपथ ब्राहमण, 5.5.5.15, तुलनीय ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', खण्ड XV, पृ0 15*
34. *वही पृ0 15*
35. *कात्यायन भाष्य, VI 29*
36. *विजय बहादुर राय, उत्तर वैदिक समाज एवं संस्कृति, पृ0 63*
37. *वृत्तकारौ रत्तिशतमानौ, ए0एस0 अल्तेकर, ओरिजन ऐंड अर्ली हिस्ट्री ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 16*
38. *डी0सी0 सरकार, दि शाण, जे0एन0एस0आई0, खण्ड ग्टप् पृ0 40*
39. *वही, मन्जादिस दक्षिण भारतीय तौल की एक प्रचलित इकाई है।*
40. *जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 16*
41. *वृहदारण्यक उपनिषद III 1.1–2*
42. *जे0एन0एस0आई0, खण्ड ग्ट पृ0 16*
43. *वही, पृ0 18*
44. *बलराम श्रीवास्तव, ट्रेड ऐंड कामर्स इन एंशेट इण्डिया, पृ0 161*
45. *ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजिन ऐंड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड ग्ट, पृ0 17, शतपथ ब्राह्मण 4.3.24–26*

46. ए0एस0 अल्तेकर, ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया, जे0एन0 एस0आई0, खण्ड XV 1953, पृ0 17
47. ब्रजदेव प्रसाद राय, दि लेटर वैदिक इकानामी, (दिल्ली) 1994, पृ0 367
48. जातक खण्ड IV, पृ0 97, 460
49. वही, खण्ड IV, पृ0 106, खण्ड टए पृ0 164
50. अष्टाध्यायी, V 1–37
51. ए0एस0 अल्तेकर, ''ओरिजन ऐंड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 18
52. वी0ए0 स्मिथ, कैअेलॉग क्वायन इन दि इण्डियन म्यूजियम, पृ0 133
53. जे0 एलन, कैटेलॉग ऑव क्वायन ऑव एशेंट इण्डिया, (लन्दन 1936), पृ0 214–19, तुलनीय, के0डी0 वाजपेयी, इंडियन न्यूमेस्मेटिक स्टडीज, (दिल्ली : 1976) पृ0 2
54. बलराम श्रीवास्तव, ट्रेड ऐंड कॉमर्स इन एंशेट इंडिया, पृ0 162
55. जे0एन0एस0आई0, खण्ड XXII, पृ0 38
56. वही, खण्ड XXII, पृ0 42
57. नन्दोपक्रमाणिमानानि कशिका, II, 4–21, टप्ए 2–14
58. जे0एन0एस0आई0, खंड II, पृ0 3
59. एम0ए0एस0आई0, संख्या 59, पृ0 3
60. शत सहत्रान्ता च निस्कात, अष्टाध्यायी, V, 2.119
61. चतुः सॉवर्णिको निस्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः 11 मनु VII, 137, निस्क सुवर्णश्चत्वारः। याज्ञवल्क्य, प्ए 365
62. महाभाष्य, VI, 3.56, 163, बी0एस0 अग्रवाल, इण्डिया ऐज नोन टु पाणिनि, पृ0 260
63. आर शामशास्त्री, कौटिल्य अर्थशास्त्र, II 19
64. जातक, खण्ड IV, पृ0 106–08
65. मनुस्मृति VII, 134, याज्ञवल्क्य स्मृति, II, 363, जे0एन0एस0आई0 खण्ड XXII, पृ0 30
66. अष्टाध्यायी, V 1, 27
67. हे कृष्णते समधृते विज्ञेयो रूप्यमाषकः।
68. ते षोडश स्याहरण पुराणश्चैव राजतम् धरणानि दशजेयः
69. शतमानस्तु राजतः।। मनुस्मृति, XIII, 136–137
70. हे कृष्णते रूप्यमाषो धरणं षोडशैव ते शतमाणं तु दशभिर्धरणैः पलमैव तृ।।याज्ञवल्क्य स्मृति, I, 364–65
71. ए0एस0 अल्तेकर, 'ओरिजन ऐड अर्ली हिस्टरी ऑफ क्वायनेज इन एंशेट इण्डिया', जे0एन0एस0आई0, खण्ड XV, पृ0 22